ISSN 2349-638X

REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL (AIIRJ)

MONTHLY PUBLISH JOURNAL

VOL-II ISSUE-II Feb. 2015

Address
- Vikram Nagar, Boudhi Chouk, Latur.
- Tq. Latur, Dis. Latur 413512
- (+91) 9922455749, (+91) 9158387437

Email
- editor@aiirjournal.com
- aiirjpramod@gmail.com

Website
- www.aiirjournal.com

CHIEF EDITOR – PRAMOD PRAKASHRAO TANDALE

‘‘जैनेंद्र के उपन्यासों में चित्रित नैतिकता के बदलते प्रवाह’’

प्रा.सुहास वसंतराव अंगापूरकर
हिंदी विभाग प्रमुख
शिक्षणमहर्षी बापूजी साळुंखे महाविद्यालय,
कराड,ता. कराड,जि. सातारा.
मोबा. ९४२३२६३९५०

जैनेंद्रकुमार ने अपने उपन्यासों मे पारंपारिक नैतिकता को छेद देते हुए मनुष्य जीवन में बदलते प्रवाह एवं रिश्तों की बदलती मानसिकता को खोलने का प्रयास किया है।परख में जैनेंद्रकुमार ने त्याग और निश्चल प्रेम के आदर्श की महिमा गायी है। पढा–लिखा सत्यधन आदर्श की महिमा बरवान सकता है और दूसरों को आदर्श के मार्ग पर बढने के लिए उत्साहित करता है, किन्तु जब आदर्श के अनुसार स्वयं आचरण करने की बात उठती है तो वह लाभ–हानि का हिसाब जोड़ने लगता है। आदर्श एवं व्यवहार के बीच विद्मान इस खाई की ओर संकेत करते हुए जैनंद्र कुमार इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि चारित्रिक दृढता और निष्कपटता, दोनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। सरल और निष्कपट कट्टो के लिए त्याग एवं निश्चल प्रेम की आदर्श का पालन बहुत स्वाभाविक है, जबकि हिसाब–किताबी सत्यधन, उस उच्च आदर्श के पालन की बात सोचते ही घबरा उठता है।

नैतिक प्रश्नों के आधार पर कथानक का गठन करने के उदाहरण ढूँढने के लिए जैनेंद्र कुमार की प्राय: सभी औपन्यासिक कृतियों को एक विहंगम दृष्टि से देखना आवश्यक है।

उपन्यासों के प्राय: सभी कथानक अंतर्मन में उठनेवाले संघर्ष पर आधारित है। व्यक्ति के अंतरमन में उठनेवाला द्वन्द्व, अंन्तवोगत्वा, परस्पर विरोधी नैतिक मान्यताओं एवं आदर्शों में होनेवाले संघर्ष का ही प्रकट रूप है। उदाहरण के लिए परख का कथानक, सत्यधन और कटटो के मन में उठनेवाले संकल्प–विकल्पों पर आधारित है। एक और आदर्श एवं प्रवृत्ति तथा त्याग एवं लोभ की हिलारों पर झुलता हुआ सत्यधन है, तो दूसरी और त्याग, निष्कपटता एवं नैतिक आदर्शों पर निष्ठा रखनेवाली कट्टो है, जिस में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न नहीं होता। सत्यधन की डौवाडौल मन:स्थितील और कटटो तथा बिहारी की निष्कपट निष्ठा के चित्रण को आधार बनाकर ही परख का कथानक रचा गया है।

समग्रत परख में जैनेंद्र ने स्वास्थ, सहज सामाजिक प्रेम अथवा विवाह का न तो चित्रण ही किया है, न उसे मान्यता दी है। सत्यधन के भावुक रोमानी आदर्शों की असफलता द्वारा एक सत्य भावुक रोमानी आदर्श की प्रतिष्ठा की है। ऐसा संबंध न तो व्यवहार में सहज संभव है, न आदर्श के रूप में स्पृहणीय है। अपने अगले उपन्यासों में जैनेंद्र ने विवाह के इस रूप की प्रतिष्ठा नहीं की है।

जैनेंद्रकुमार को अपने पहले उपन्यास 'परख' में जिस प्रेम का आदर्श प्रस्थापित करना था उसके बारे में वे पूरी तरह सफल नहीं हुए है। उनके पात्र सत्यधन कटटो इन पात्रों के व्यवहार से ऐसा मालूम होता है कि वे अपनी बात का पूरा समर्थन नहीं कर सके। इस उपन्यास में नैतिकता को धक्का देनेवाली घटना का वर्णन नहीं है। फिर भी इन पात्रों के आदर्श, नैतिक दृष्टि से योग्य नहीं है।

जैनेंद्रकुमार का बहुचर्चित दूसरा उपन्यास 'सुनीता' है। और आपने इस उपन्यास में सुनीता हरिप्रसन्न के सामने विवस्त्र होने की घटना का चित्रण किया है। यह घटना सामाजिक तथा वैयक्तिक नैतिकता को धक्का देनेवाली है। सुनीता, श्रीकान्त, हरिप्रसन्न ये उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं। हरिप्रसंन्न श्रीकान्त का मित्र है। उसके मन में यौन आकर्षण के प्रति कुंठा है। इस कुंठा से उसे मुक्त करने के लिए वह अपनी पत्नी सुनीता को उसके साथ छोडकर कई दिन के लिए बाहर चला जाता है। हरिप्रसंन्न एक दिन सुनीता को लेकर अपना क्रांतिकारियों का अज्ञात स्थल देखने के लिए जाता है। रात का सन्नाटा, छिटकी हुई चॉदनी इन बातों का उसके मन पर प्रभाव होता है और वह सुनीता को समुची पाने की अभिलाषा व्यक्त करता है। इस प्रसंग का वर्णन इस प्रकार है। सुनिता में अनावरण प्रसंग को निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया है –

''मुझे चाहते हो ? मै यह हूॅं... और कह कर सुनीता ने अपना जम्पर उतारकर रख दिया।

हरिप्रसंन्न अचकचाया–सा बोला – मामी ?

हरिप्रसंन्न को वाणी में न व्यंग मालूम हुआ, न झल्लाहट। उसने कहा, 'मुझे ही चाहते हो न ? मुझे लो। और उसने अपने चारों और से साडी हटाना शुरू कर दिया।.... हरिप्रसंन्न को कुछ सूझे न सूझता था। उसने शरीर पर अब शेष बची बाडी को खोलने की चेष्टा में लगे हुए सुनीता के हाथों को जोर से पकड कर, मानों चीख कर कहा, 'भाभी । भाभी।' किन्तु सुनीता तनिक स्मिति के साथ बोली – यह तो बाधा है, हरि। उसके रहते मुझको कैसे पाओगे ? उसे उतर जाने दो तब मुझे लेना। खुली मुझको ही लेना। मुझको ही नहीं चाहते?और अपने हाथ छुडाकर अपने शरीर से चिपकी हुई बाडी को उसने फाड दिया। वह अंतिम वस्त्र भी चीर होकर नीचे सरक गिरा। '' १

यह प्रसंग जरूर ही नैतिकता को धक्का देनेवाला है क्योंकि कोई भी पती अपनी पत्नी को दूसरे के सामने इस प्रकार विवस्त्र होने का अधिकार नहीं दे सकता। पर सुनीता में पती भक्ति इतनी है कि उसने अपने को उसकी इच्छा पर छोड़ दिया और उसके बताये हुए कर्तव्य का पालन किया। हरिप्रसंन्न तो इस प्रसंग के बाद भाग ही जाता है। न वह उसे स्वीकारता है और न हीवह पूरी तरह कुंठा से मुक्त हो जाता है। सुनीता श्रीकान्त के सामने सभी बातें बताती है और कहती है कि मैंने अपने आप को नहीं बचाया पर वो कहाॅं चले गये मुझे पता नहीं।

'त्यागपत्र' जैनेंद्र का तृतीय लघु उपन्यास है। घर और बाहर की समस्या को लेकर शिल्प और नारी मूल्य की दिशा में यह जैनेंद्र का नया प्रयोग है। नवीनता के स्तर पर 'यागपत्र' एक आत्मकथात्मक उपन्यास है। सर एम. दयाल अर्थात् प्रमोद अपनी मृणाल बुआ की मृत्यु से अवसन्न होकर अपनी चीफ जजी से त्यागपत्र देता है, क्योंकि अपनी आंतरिक चेतना और परिस्थिती की असहनीयता के चरम बिंदू पर पहुॅंचकर वह अत्याधिक संवेदनशील बन जाता है। अपनी बुआ की मृत्यू के लिए अपनी असमर्थता को जिम्मेदार समझता है।

प्रमोद की बुआ मृणाल अनंघ सुंदर है। बचपन से ही मातृपितृहीन हो गयी है। इसलिए माई और मावज के घर रहने के लिए आ गयी है। उनके कठोर अनुशासन में असहनीय वेदना सह रही है। स्कूल जाते जाते अपनी सहेली के भाई से उसे प्रेम हो जाता है। परन्तु, भाभी इस बात को पसंद नही करती। इसलिए बडी निर्दयता से उसकी पिटाई कर देती है। इसके पहले मृणाल ने स्कूल में मास्टरजी से पिटवा लिया है। लेकिन तब अपनी सहेली की गलती को छिपाने के लिए वह खुद अपराधी बन गयी है। पर भाभी जब उसका स्कूल बंद कर देती है तो मृणाल का विद्रोह बढ़ता है और आत्मपीडा भी।

'त्यागपत्र' में उन्होंने सामाजिक मर्यादा और नैतिक व्यवस्था के प्रश्न को इस रचना का आधार बताया है। उपन्यास के प्रारम्भ में यह प्रश्न उठाया गया है कि मृणाल पापिष्ठा थी या नहीं ? पती द्वारा परित्यकता मृणाल, कोयले बेचनेवाले की रखैल के रूप में रहती है। फिर भटकते–भटकते अन्त में वेश्याओं, चोरों और अपराधियों की संगति में जा पहुॅंचती है। वहीं उसकी मृत्यू हो जाती है। ज्यों–ज्यों प्रमोद अपनी बुआ मृणाल के बारे में सोचता है, त्यों–त्यों उसे महसूस होने लगता है कि पतिता होने पर भी वह महान थी, क्योंकि उसने सच्चाई को अन्त तक नहीं छोड़ा। इस प्रकार 'त्यागपत्र' में उन्होंने पाप–पुण्य की नैतिक मान्यताओं के मूल्यांकन को अपनी रचना का आधार बनाया है। मृणाल का चरित्र सामाजिक द्रोह के समानान्तर अतृप्ति और आत्मपीड़न से अभिषप्त है। व्यक्तिवादी चेतना से युक्त

मानसिक अधोगति के स्तर पर मृणाल का आत्मपीड़न भोगना यथार्थता का प्रतीक है। मृणाल के माध्यम से जैनेंद्र ने फिर घर और बाहर की समस्या को उठाया है। मृणाल न घर तोड़ना चाहती है न समाज। समाजक की मंगलाकांक्षा में समाज से अलग होकर वह खुद टूट जाती है।

'कल्याणी' आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास है। इस में पात्रोल्लेख की प्रविधि अपनायी गयी है। कल्याणी की कथा के निवेदक और प्रस्तुतकर्ता वकील साहब है। श्रीमती कल्याणी असरानी एक महत्वाकांक्षी डॉक्टर है। कल्याणी अपने छात्र जीवन में विदेश के एक युवक से प्रेम करने लगी थी। वर्तमान में वही प्रेमी देश का प्रिमीयर है। कल्याणी जब वापस लौटती है तो दुष्ट घटना चक्र में फॅसकर डॉक्टर असरानी से विवाह करने के लिए बाध्य हो जाती है। यहॉ से उसके जीवन की विडम्बना का प्रारम्भ हो जाता है। कल्याणी अपने असफलक 'दांपत्य जीवनव' में पत्नी के रूप में पाने के नीचतापूर्ण कृत्यों को सहन करती रहती है। डॉ. असरानी एक व्यावसायिक बुध्दि का डाक्टर है, जो कल्याणी को पत्नीत्व से प्रेससित्व की ओर ले जाने के लिए प्रिमीयर को घर पर दावत देता है। धीरे–धीरे पत्नीत्व को छोडना न चाहनेवाली कल्याणी पती से संघर्ष करती हुई घर और बाहर की समस्या का उत्तर खोजती हुई स्वयं 'मृणाल' की भॉति टूटती है।

'कल्याणी' की समस्या भी मूलत: नैतिक समस्या ही है। आदर्श एवं प्रवृत्ति, भोग एवं त्याग के संघर्ष की कहानी को उपन्यास की नायिका कल्याणी, के माध्यम से कहकर उसकी आत्मिक छटपटाहट को व्यक्त किया है। पति की स्वार्थपरकता के कारण पति में भक्ति रखने में असमर्थ कल्याणी अपने दोष का परिमार्जन करने के लिए आत्मपीड़न की ओर प्रवृत्त होती है और मृत्यू का आव्हान करती है। कल्याणी के जीवन में घोर मानसिक क्लेश और अन्त में उसकी मृत्यू दिखाकर जैनेंदकुमार ने पतीव्रत्य के नैतिक आदर्शों तथा इसके व्यावहारिक रूप के बीच उत्पन्न होनेवाली आधुनिक काल की विषमता का चित्रण कर दिया है। संपूर्ण कथानक में गृहिणी और डाक्टरनी, प्रिया और प्रगल्भा, अतीत और वर्तमान, ईश्वर भिरूता और मौतिक लिप्सा इनके बीच का मध्यम मार्ग खोजने में असफल कल्याणी के जीवन का उतार और चढाव चित्रित है।

'सुखदा' लेखक के विश्रांतीकाल के पश्चात का पहला उपन्यास है। यह उपन्यास आत्मकथा शैली में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास की नायिका सुखदा एक अस्पताल में तपेदीक की बीमारी से ग्रस्त होकर रूग्ण श्यैया पर पडी हुई है। वह अपनी आपबीती बता रही हैं । सुखदा एक अच्छे परिवार की युवती थी जिसने अपने मन में पति और परिवार संबंधी बहुत से सपने पाल रखे थे। परन्तु

उसका विवाह कान्त नामक एक ऐसे युवक से संपन्न हुआ जिसकी आमदनी कुल १५०—०० रूपया से अधिक न थी। विवाह के प्रारंभिक काल मं पति के प्रेम के प्रभाव में सुखदा सुखी थी। पर जैसे ही उस प्रारंभिक प्रेम के प्रभाव से मुक्त हो गयी उसे जीवन की वास्तविकता का अनुभव हुआ। वह स्वयं को खोखला महसूस करने लगी। स्वप्न और सत्य फर्क ने उसके जीवन को दुष्कर बना लिया था।

एक दिन एक क्रांतिकारक, नौकर के रूप में सुखदा के घर आकर रहने लगा। कुछ काल के पश्चात यकायक नौकर ने नौकरी छोड दी। वह पुलीस के द्वारा पकडा गया। इसी समय एक और क्रांतिकारी लाल के क्रांतिकारी कार्य से और व्यक्तित्व से सुखदा प्रभावित हो गयी। अपनी घर की उकताहट को दूर करने के लिए लाल के साथ सुखदा भी क्रांतिकारी कार्य में सहयोग देने लगी, और घर के बाहर निकल पडी।

सुखदा और लाल के बीच अगला प्रसंग चित्रित किया है वह सामाजिक तथा वैयक्तिक नैतिकता को धक्का देनेवाला है। वह इस प्रकार है ‘‘वह क्षण मुझे भूलता नहीं— जीवन और मृत्यू के बीच का वह क्षण। दोनों मानों एक होकर इस क्षण में पिघल आये थे। इस तरह बाघ के से अपने सख्त पंजों में मेरे कंधे को कसे, मेरी आँखों को वह ऐसे देख रहे थे जैसे नहीं बूझ पाते हों कि मै हूँ, कि क्या हूँ... वह क्षण अनन्त होता चला गया। समय तब न था, और वह पल त्रिकाल जितना अनन्त था कि देखते—देखते सहसा हिंसा से उन्होंने मुझे अपने आप में जकडकर दबोच लिया। उस समय मैनें शारीरिक और आत्मिक दोनों किनारों से अनुभव किया कि मैं नहीं हुई जा रही हूँ। मरी जा रही हूँ, निश्चय जीने से अधिक हुई जा रही हूँ। कब मुझे अलग किया और छिटका कर दूर फेंक दिया, मैं नहीं जानती। मैं सोफे में आर गिरी। वह कोच में ही बैठे— कहा— जाओ, बच गयी तुम। २

‘सुखदा’ में हम ऐसी नारी का चित्र देख सकते हैं जो पारिवारिक जीवन और सामाजिक जीवन में सामंजस्य खोजने का प्रयत्न कर रही है। परन्तु उसमें सफल न होने के कारण निराशा का अनुभव करते हुए आत्मपीडा भोग रही है। यह नायिका मूलत: नैराश्यपूर्ण मनोव्यथा ग्रसित नायिका है। जो पती प्रेम से अतृप्त रहकर पर पुरूष के प्रेम की अभिलाषिणी बन गयी। परन्तु उसकी आत्मपीड़ा ने उसे जीवन संघर्ष में हरा दिया और वह मृत्यु मार्ग की यात्री बन गयी।

‘विवर्त’ वर्णनात्मक शैली में लिखा गया जैनेंद्र का प्रथम नायक प्रधान अथवा पुरूष प्रधान उपन्यास है। उपन्यास का नायक जितेन संपादकीय विभाग में काम करता है, और रिटायर्ड जज की संतान भुवन मोहिनी के आकर्षण में बंधा हुआ है। दोनों के प्रेम में गरीबी और अमीरी का अंतर बाधा बन

जाता है। और भुवनमोहिनी का विवाह इंग्लैंड रिटर्न बॅरिस्टर नरेंशचंद्र के साथ संपन्न होता है। जितेन एक असफल प्रेमी बनकर शहर छोड देता है और क्रांतिकारी बन जाता है। एक रात ट्रेन के उलट जाने के कारण वह भुवनमोहिनी के घर में आश्रय ले लेता है। वह बीमार हो जाता है। अपने क्रांतिदल की आवश्यकता के लिए धन प्राप्ति के हेतु वह भुवनमोहिनी के आभूषणों को चुरा लेता है। जितेन आभूषणों के बदले धन की मॉग करने के लिए अपने साथियों द्वारा भुवनमोहिनी को गुप्त स्थान पर बुलाता है, जहॉ भुवनमोहिनी जितेन की कुंठा दूर करने के लिए आत्मसमर्पण करती है। उससे जितेन को पुलीस के सामने आत्मसमर्पण करने की प्रेरणा मिलती है।

'विवर्त' में प्रेम और विवाह समस्या के रूप में नही लिये गए, न उनका विश्लेषण हुआ है, न पात्रों की उक्तियों के माध्यम से उसे यथेष्ट विस्तार मिला है, किंतु कथा की घटनाओं और पात्रों के विश्लेषण के माध्यम से जैनेंद्र की चिर–परिचित अवधारणाओं की ही पुष्टि इस उपन्यास में भी हुई है।'विवर्त' का नायक जितेन तो असफल प्रेम की चोट से तिलमिलाकर हिंसा काम मार्ग अवलंब कर बैठता है। उसके पुन: सही मार्ग पर आने, अर्थात नैतिक आचरण की ओर प्रवृत्त होने को लेकर, 'विवर्त' के कथानक की रचना की है।

'विवर्त' की कथा 'सुखदा' को कथा के समान ही प्रेम की असफलता, आर्थिक विषमता और क्रांतिकारिता में आत्म समर्पण आदि में समान है। जैनेंद्र के मतानुसार क्रांति समज की नींद तोडने का अस्त्र है। यहॉ नायिका भुवनमोहिनी का अहं प्रेम को कुंठा से मुक्त करने में उदात्त बन गया। इस उपन्यास में प्रत्यक्ष वर्णन सहित नैतिकता को धक्का देनेवाली घटना वर्णन नही है। फिर भी कथानक का गठन नैतिक आदर्शों में नहीं चित्रित किया है। असफल प्रेमी और उदार पति का चित्र भुवनमोहिनी को बीच में रखकर खिंचा है।नयक 'जयंत' के द्वारा प्रस्तुत 'व्यतीत' जैनेंद्र का आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास हैं। जयंत की प्रेमिका अनीता है, पर उसका विवाह जयंत के साथ नहीं होता। मिस्टर पूरी के साथ होता है। परन्तु अनीता विवाहिता होकर भी जयंत की चिंता में लीन रहती है। जयंत एक वृत्तपत्र में सहसंपादक का काम कर रहा है। इस नौकरी से जयंत सिर्फ ७५–०० रूपये प्रतिमास वेतन प्राप्त करता है। अर्थात् उसका सहसंपादकत्व दरिद्रता का ही साधन है। इसलिए अनीता यह चाहती है कि जयंत यह नौकरी छोड दे और कहीं अन्य स्थान पर नौकरी प्राप्त करके अधिक अच्छा वेतन कमाएँ। परन्तु अनीता के ये प्रयत्न का निष्फल हो जाते हैं। अनीता का प्रेम प्राप्त न होने के कारण असफल जयंत कुंठा का शिकार हो जाता है। न तो वह नौकरी छोड़ता है न वह भूतपूर्व प्रेमिका अनीता की इच्छा के अनुसार गृहस्थी भी बसा लेता है। बस अंदार ही अंदर घुटता रहता है। कुछ काल के पश्चात जयंत के जीवन में उसकी चचेरी बहन

'चंद्रिका' का आगमन हो जाता है और उसके प्रति आकृष्ट होकर जयंत उससे विवाह बध्द हो जाता है। इस विवाह में उसका कोई संतोष नहीं, क्योंकि अपनी प्रेमिका अनीता को भूलना उसके लिए असंभव बात है।

इस उपन्यास में नैतिकता को धक्का देनेवाले तीन प्रसंग है। उनमें दोन प्रसंग महत्वपूर्ण तथा एक प्रसंग गौण है। गौण प्रसंग को सिर्फ निर्देश किया है और बाकी दो प्रसंगों का विश्लेषण इस प्रकार है।'व्यक्तीत' में भी चंद्रिका का स्वयं विवस्त्र होने का एक प्रसंग इस प्रकार है''सुनकर दो–क्षण मुझे ऐसा देखा। कैसी निगाह थी। फिर एका–एक लिहाफ–कंबल एक और फॅक्कर वह खडी हो आयी। रात की इकहरी यथावश्यक पोशाख में उसकी ऊँचाई कुछ और हो गयी। ऑखों में तडपती बिजली, बदन तना जैसे कमान। चित्त को जाने कैसा आव्हान हुआ। घबराकर कहा – क्या करती हो, सर्दी खा जाओगी। नहीं समझ सका, क्या हुआ। सब कुछ हो सकता था। उस नारी मूर्ति में सब संभावनाएँ लहक आयी। शायद वे ही आपस में गुंथ बैठी । वह मूर्ति अपनी जगह से न हिली न न डुली। जैसे निष्काम ज्वाला हो। धीमे से कहा– चन्द्री सर्दी लग जायेगी। दॉत मिसमिसाकर झटके से तनके तनिक से अंतिम वस्त्र को उतारकर मेरे मुॅह पर जोर से फॅकते हुए कहा, लो अब तो नहीं लगेगी सर्दी। ३

'व्यक्तीत' मं एक दूसरा प्रसंग इस प्रकार है अनिता भी पुरूष के पुरूषत्व को निमंत्रण देने की ठिठाई से चूकती नहीं। जयंत से कहती है – ''स्त्री देह को शास्त्र ने अशुचि कहा है। पाप की खान बताया है। तुम यही मानते हो न जयन्त ? हम सब क्या वैसे ही है ? सब अशुचि है, अपावन है – नहीं तो तुम भागते क्यों हो जयन्त ?...बोलो जयन्त। बस, आज का दिन है और वह खुद दे गए हैं, फिर कुछ मेरे पास नहीं बचेगा... मै तुमसे पूछती हूँ स्त्री डायन है ? खा जायेगी ? लूट लेगी? भ्रष्ट कर डालेगी ? आज तुम उत्तर देने से जयन्त बच नहीं सकोगे...।''४

'व्यतीत' में और एक प्रसंग स्त्री की प्रगल्भता का है। सुमिता की घुष्टता का एक प्रसंग इस प्रकार है – ''मोटार में सुमिता दूसरी हो आयी। घर में वह सदा सभ्य थी । लेकिन मोटार का एकांत जैसे घर न हो। वहॉ उसकी प्रगल्भ धृष्ठता पर मुझे असमंजस हुआ। मैं एक और अलग हटा पर हटने की कितनी जगह थी। मैने निश्चयपूर्वक हाथ को अलग हटाया। यह अपमान ही था। सिसकारती–सी बोली, यू सिस्सी, यू डेयर। ''५

पत्नी चंद्री द्वारा किया गया आत्मसमर्पण वह ठुकराता है क्योंकि उसके मन में भूतपूर्व प्रेमिका अनीता का असफल प्रेम कुंठा के रूप में है। इसलिए जयंत के मन की कुंठा को मिटाने के लिए

अनीता जयंत के समाने आत्मसमर्पण कर डालती है, तभी उससे जयंत विरक्त हो जाता है। अर्थात् जयंत की कुंठित कामभावनाओं की पूर्तता के लिए अनीता सहायक सिध्द होती है। अपने बंधन से मुक्त कर उसकी पत्नी की ओर उन्मुख कर देती है। इस प्रकार पत्नीत्व और प्रेयसित्व दोनों प्रकार के कर्तव्यों को निभाती है। 'व्यतीत' उपन्यास से बुध्दि और हृदय या भावना और व्यवहार के संघर्ष के आलेख में जीवन की व्यस्तता का चित्रण किया गया है।

'जयवर्धन' जैनेंद्रकुमार का उपन्यास उनकी निरंतर विकसित दार्शनिक चेतना और गांधीवादी विचारधारा की परिणति कहा जा सकता है। यह एक बहुचर्चित उपन्यास है। जिस में डायरी शैली का उपयोग किया है। एक अमरिकी पत्रकार बिल्बर्ट शोप्डन हुस्टन के द्वारा जयवर्धन के जीवन की झॉकी के रूप में इसका कथानक प्रस्तुत किया गया है।

इस उपन्यास की नायिका इला जयवर्धन के साथ बारह वर्ष से पत्नी के रूप में रह रही है। पर उन दोनों ने विवाह नहीं किया है। क्योंकि उसके पिता विवाह को अनुमती नहीं देते । इस प्रकार विवाह के बिना रहना यह एक अपने आप में वैशिष्टयपूर्ण घटना है। वह एक दिन अपने गोपनीय प्रेम रहस्य का उद्घाटन मिस्टर हुस्टन के समक्ष करती है। वह प्रसंग इस प्रकार है।

'जयवर्धन' की इला भी मि. हुस्टन के समक्ष अपने गोपनीय प्रेम–रहस्यों का वर्णन करते हुए कहती है – ''फैले हाथ बढते मेरी ओर आते ही गये और प्यार से बिगडा मेरा यह नाम इली पछाडों पर पछाड खाता गूँज–गूँजकर मेरे कानों के पर्दों पर पडता मेरे समुचेपन में रमता गया..... उन हाथों ने न मुझे छुआ, आँचल के छोर को ही तनिक उठाया, और उसे अपने होठों और फिर आँखों से लगाया, मेरे सारे गात में कांटे सिहर आये, आँखें बन्द हो गयीं, कानों में फुसफुसी, मानों नीरव वाणी में सुनती गयी.... इली... ? ओह जाने कैसी पुकार थी ? काल के किस छोर से वह चली आ रही थी। मेरे समुचेपन में से बोल उठा : लो, लो, मुझे लो... तभी एक हल्का–सा परस मेरी उँगलियों को छू गया, सारे गात में एक–साथ बिजली दौड गयी और मै वजंना करती चिल्लाई नहीं, नहीं, नहीं...।''६

जयवर्धन के व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू है, वह विवाह के संस्थान में विश्वास नहीं रखता है, उपन्यास का प्रधान पात्र इला नित्य उसके संपर्क में आता है। इला के पिता इसका विरोध करते हैं। भारतीय संस्कृति के एक पुजारी चिदानंद भी इला के कारण जयवर्धन के विरोधियों में समाविष्ट होते है। जयवर्धन के पदत्याग के बाद पश्चात् इला के पिता जयवर्धन से विवाह करने के लिए इला को अनुमति दे देते हैं। पर उसी रात जयवर्धन गायब हो जाता है।

जयवर्धन के प्रेम और विवाह का जो आनंद जैनेंद्र ने चित्रित किया है, उसी से जयवर्धन के निजत्व का निर्माण दिखाया है। इस प्रकार उपन्यास में प्रेम, विवाह, राजनीतिक पदत्याग, आदि से संघर्ष करनेवाले नायक के व्यक्तित्व का निर्माण साकार हो गया है। इस प्रकार उन्होंने इस उपन्यास में सामाजिक पारिवारिक तथा राजनितीक नैतिकता को धक्का दिया है।

'जयवर्धन' के बाद १० वर्ष के पश्चात लिखा गया उपन्यास 'मुक्तिबोध' जैनेंद्र के राजनीतिक और सामाजिक बोध को और उनके जीवन दर्शन को उजागर करता है। यह उपन्यास भारत की केंन्द्रीय सत्ता में होनेवाले विशिष्ट परिवर्तनों की आवश्यकता और प्रतिक्रिया इनका एक जीता जागता आलेख है।

'मुक्तिबोध' का नायक 'सहाय' एक कॉग्रेस सदस्य और मंत्री होने के बावजूद गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित था। इस उपन्यास में जो नैतिकता को धक्का देनेवाला प्रसंग चित्रित किया है वह इस प्रकार है। 'मुक्तिबोध' उपन्यास का नायक सहाय जिसकी उम्र अब चौवन साल की है और उसकी प्रेयसी जिसकी उम्र अब बयालीस की है। दोनों भी भिन्न भिन्न व्यक्तियों से विवाहित है। फिर भी एक दूसरे को हद से ज्यादा चाहते हैं। उनके बारे में एक प्रसंग प्रस्तुत उपन्यास में है। वह इस प्रकार है –

''मै इस प्रकरण को बढ़ाना नहीं चाहता हूँ। सूरजकुण्ड पर आकर देखा कि सामान में बहुत कुछ है। दो मुडने वाली कुर्सियॉ तक है। फलास्क में कॉफी है और लंच का पूरा सर्रजाम है। मैं इस सब के लिए कतई तैयार न था। पर तैयारी का प्रश्न ही न रह गया था। गाडी रोक कर उसने उस खंडहर में अपने लिए जगह छॉटी कि जहॉ जरा ओट थी और छूप खुली आ सकती थी। कुण्ड पर करीब सन्नाटा ही था। उसने कुछ सामान मुझे दिया, कुछ अपने हाथ में लिया और चाबी लगाकर गाडी को किनारे छोड़ दिया। एकांत जगह पर आकर उसने कैनवास की कुर्सियॉ फैला दीं। सामान नीचे पटक दिया। कपडे उतारने लगी। अन्दर उसने वेडिंग सूट पहना हुआ था। आकर कुर्सी में फैल गई, कहा – तुम भी कुर्सी लेलो। सूर्य–स्नान नहीं करोगे ? या कपडे लादे रहोगे ? कुर्सी की पीठ कर लो सूरज की तरफ।' ७

नीला हंसी। बोली – 'यानी उपासिका के कपडे पहन लूँ, यह पसंद है। वह तो पहनूंगी ही। लेकिन सूरज भी है और धूप बदन को छू जाए तो इसमें कोई खतरा नहीं है।

'सच बताओ तुम क्या चाहती हो ?'

ऐसा लगता है तुम्हें कि मैं और कुछ चाहती हूँ ? जीने से कुछ और ? और जिलाने से कुछ औ? हॉ लगता है।

'मुझे नहीं मालूम था, सहाय कि, तुम्हारा दिल इतना कमीना हो गया है।'

मै सूनकर चौंका। मुझे यह आशा न थी, मैं अपने से झगड रहा था, उस पर लाने के लिए मेरे मन में आरोप–अभियोग तनिक न था।

नीला ने हंसकर कहा, 'तुम्हारे कूठ मगज के लिए, और किसलिए ?' मुझे सचमुच क्रोध हो आया। कहा, मनज का इलाज तुमने बदन में समझ रखा है, क्यों ? वह और भी हँस आई, बोली, 'मर्ज और इलाज सब शरीर में होते है। बन्द। पर मर्ज, खुले में इलाज।'

'इसीलिए अपने शरीर का तुम्हे गुमान है।'

'हॉ, इसीलिए। बुध्दि का गुमान तुम्हारी तरह मुझे तो नहीं हो सकता है शरीर का ही हो सकता है।'

'ये सब नहीं होगा नीला। मुझे तुम वापस पहुँचा सकती हो?'

'जरूर पहुँचा सकती हूँ। कह क रवह मुस्कराई और कुर्सी पर बाहे पीछे करके उसने अंगडाई ली। इसमें टांगे दोनों आगे को तन आई और अंगडाई के बाद बदन शिथिल हो गया। उसके उठने और तैयार होने के कोई आसार नहीं दिखाई दिये । तो मैने कहा, 'उठीं नहीं, अभी चलना होगा।'४

संक्षेप में जैनेंद्र ने हमेशा से घर और बाहर की विषमताओं को त्यागकर व्यक्ति के अंतर बाहय का चित्रण किया है। सहाय की आत्मपीडा का चित्रण उपन्यास की उपलब्धि है। पूरे उपन्यास का कथानक सिर्फ चार दिनों के अवकाश में घटित होता है।

इस उपन्यास में लेखक ने राजनीतिक पारिवारिक तथा सामाजिक नैतिकता को धक्का दिया हे। 'अनन्तर' को जयवर्धन उपन्यास में प्रकट विचारधारा की विकसित अथवा प्रौढ कृति कहा जा सकता है। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। उपन्यास का नायक 'प्रसाद' अपने पुत्र और पुत्रवधु को जो मधुपर्व मनाने के लिए जा रहे है।, उनको स्टेशन पर विदा करते जाता है। और वहॉ से लौटते हुए अपने जीवत की व्यर्थता को अनुभव करता है। व्यर्थता बोध की स्थिति में वह पलायन का मार्ग अपनाना चाहता है और अपने गुरू 'आनंद माधव' और 'अपा' का प्रस्ताव सुनकर माऊंट अबू पर उनको ले चलता है। प्रसाद अंतरमुखी चेतना से ग्रस्त है। 'जयवर्धन' और 'मुक्तिबोध' उपन्यास से समान राजसत्तात्मक बोध

के स्तर पर वह व्यक्ति मुक्ति चाहता है, परन्तु अपरा के माध्यम से माऊंट अबू पर विरक्तता के स्तर पर इनवॉल्वमेंट खोजना चाहता है।

इस उपन्यास में नायक प्रसाद तथा अपरा के बीच जो प्रसंग है वह नैतिकता को धक्का देनेवाला है। क्योंकि अपरा प्रसाद की पत्नि नहीं है। फिर भी वह प्रसाद के साथ मात्र परिचारिका के रूप में सफर कर रही है। वह प्रसंग इस प्रकार है।

'अनन्तर' उपन्यास में जो प्रसंग है वह कुछ इस प्रकार है –

''बुरा न मानिएगा, आपक लिए मुझ में मूख नहीं हो कसती – आप वृध्द हैं नहीं जितने बनने लगे है। ऐसी हालत में यदि मैं आपकी सुविधा बन सकूँ तो इस में से क्या किसी को घबराना चाहिए ? प्रौढ या वृध्द होने से ही क्या पुरूष के प्रति स्त्री का कर्तव्य समाप्त हो जाता है ? या युवती होने से स्त्री बरी हो जाती है ? मैं उन युवतियों–सी नहीं हूँ जो पुरूष को उसके यौवन के लिए चाहती है।''९

उसी उपन्यास में दूसरा प्रसंग कुछ इस प्रकार है –

''जी नहीं, आप डरिए नहीं। न्याय का अंतिम रूप मेंरे लिए यह है कि मैं अपने को गिनती में न लूँ। इसलिए जब मुझे कुछ भी गिना जाने लगता है तो वही सहना कठिन हो जाता है। सोच–विचार कर मैने पा लिया है अगर मै स्त्री हूँ तो पुरूष के प्रति यह मानने में मुझे संकोच नहीं होना चाहिए। दोनों ओर स्वास्थ्य तभी रहेगा। अपने को अलग अनछुआ और पवित्र रहने का जो भाव बीच में आकर बाधा बनता है, वही हर्ज और जुर्म है। वह अनसोशल है, अनगौडली है। उसी से जितनी होती दु:ख–दुविधा पैदा होती है और स्वत्व के उसी भाव को ऊँचे उठाए रखने के लिए तरह–तरह के आप्तवचन गढ लिए गये है। उन्हीं के कारण कुंठा और क्लेश उपजते है–सोचा था, प्रसाद तुम इन चीजों से उठ चुके होंगे। खैर जाने दो।'' १०

अपरा प्रसाद के साथ मात्र परिचारिका के रूप में नहीं आयी हैं, पत्नीत्व की रिक्तता को भरने के लिए आयी है। अत: पत्नीवत व्यवहार करना उसका धर्म हो गया है, इसी से रेल में ठीक समय पर नींबू पानी देने के साथ पत्नी के रूप में आचरण करने का प्रयत्न करती दिखाई देती है।

''अपरा ने एकायक बैठकर मेरे चेहरे को हाथें में लिया, माथे पर चूमा, कहा 'गुड नाईट' औरबिना देर लगाये वह अपनी बर्थ पर पहुँच गयी।''११

सभवत: पाश्चात्य सभ्यता की अभ्यस्त अपरा के लिए यह सहज व्यवहार हो। प्रसाद के लिए नारी का स्वेच्छचार आतंकपूर्ण बात है। परन्तु अपनी पुत्री 'चारू' के नारीत्व का दूसरे के सामने समर्पण अपने घर के निर्माण के लिए योग्य समझकर उसका स्वीकार करता है। यह प्रसाद का पारिवारिक स्तर पर अपने अंतर जगत से अपने बाहय को जोडने का प्रयास है। लेखक ने इस उपन्यास में पारिवारिक तथा वैयक्तिक नैतिकता को धक्का दिया है।

'अनामस्वामी' उपन्यास में 'त्यागपत्र' के 'प्रमोद' के त्यागपत्र देने के पश्चात के जीवन का चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। प्रथम एक दो परिच्छदों में चिंतन परक विश्लेषण प्राप्त होता है और कथात्मकता नगण्य है। फिर से बारह परिच्छेद लिखकर कथात्मकता का आशय प्रकट किया है। प्रमोद के बालजीवन का एक साथी प्रबोध अब 'अनामस्वामी' है। उसका एक आश्रम है, जिस में अहंकार और अर्हता के ज्वार से मुक्त जीवन जीने की कल्पना साकार करने का प्रयत्न किया गया है। शंकर उपाध्याय और अनामस्वामी में बहुत तीव्र ईर्ष्या है, जिसका कारण रानी वसुंधरा जो शंकर उपाध्याय की भक्त है, और उन्हीं के दूसरे भक्त कुमार की विवाहिता है। इस उपन्यास में नैतिकता को धक्का देनेवाली घटना शंकर उपाध्य और वसुंधरा इन दोनों के बीच है। उसका वर्णन इस प्रकार है।

"उपाध्याय क्लब के प्राण थे। समूची प्रेरणा ही थे, लेकिन क्लब की उत्तीर्णता से भी वह उत्तीर्ण थे। तनिक भी उच्छंखल व्यवहार उनमें नहीं देखा गया। मानो मुक्तता प्रदान करनेवाले केंद्रस्थ वह चित्–पुरूष थे। यदि कहीं किसी चित्त के आतर प्रान्त में संकोच का उद्रेक होता, अथवा असमंजस का कण शेष रह जाता, तो अपनी वाणी के प्रखर प्रताप से उस सब द्विविध को बाष्पीकृत करके वह उस चित्त को स्वस्थ, मुक्त, निर्शक बना देते थे। अन्त:करण ही है जो कचोटा करता है। वहॉ से आप नैतिक, सामाजिक को हटा देते है, प्राकृतिक आध्यात्मिक को बिढा देते है, तो द्वंद्व मिट जाता है, निर्दन्द्र उपलब्ध हो आता है। द्वन्द्व जिस में नहीं है, वही है फिर सत्य, वहीं अद्वैत, वहीं शुध्द–बुध्द–मुक्त परम वैकल्य।

वसुन्धरा की काया मात्र आदर्श की तो बनी न थी। वय का तारूण्य उसमें था, रक्त की उष्मा थी...हॉ तुम यह नहीं हो। वस्त्र है, और वस्त्र गिर जायेंगे। धारणायें एक–एक करके उतरती जायेगी। तुम वह नही हो, आत्मा हो, तुम प्रकाश हो। तुम उठ रही हो। बन्धन गिर चुके है। आवरण शरीर का भी नही रह गया है। प्रकाश की शिक्षा हो तुम, लौ की भॉति उठ रही हो तुम ऊपर और ऊपर... भार जाता रहार है। नृत्य की थिरकन में जीवन को चैतन्य की लीला होने दो...तुम दिव्य हो, असीम हो...हो ध द्रुत और दृत और द्रुत...शनै: शनै: औरों के साथ लालायमान चेतना की मुग्धता में समर्पित प्राय: निर्वसन हो आती है

वसुन्धरा...। किन्तु क्या स्वीकार्य होती है ? नहीं, वह देव पुरूष को अतिकान्त है। अर्पण का उपहार लेकर वह मेनका लरजती, इतराती, अंगीकरण मॉगती उस शरण में आने को बढती है। और वह केंन्द्रस्थ शिखर विद्रुप, पुरूष अट्टाहास कर उठता है...यह है चित्र जो खंड–खंड के योगफल में से मुझे प्राप्त होता है और जिसकी दारूणता पर में थरा आता हूॅ। '' १२

परंतु, शंकर द्वारा वसुंधरा का समर्पण न केवल ठुकराया जाता है अपितु शंकर उपाध्याय वसुंधरा की हत्या का कारण बन जाता है। इस उपन्यास में पारिवारिक तथा आध्यात्मिक नैतिकता को धक्का दिया है।

निष्कर्ष :–

इस प्रकार जैनेंद्रकुमार की सभी औपन्यासिक कृतियों में नैतिकता को धक्का देनेवाली घटनाओं का परिचय कौन से प्रकार की नैतिकता को धक्का दिया है इसका विवेचन मिलता है। 'परख' उपन्यास में लेखक जो आर्दा प्रस्थापित करना चाहते है वह व्यवहार में लाना मुश्कील है। 'सुनीता' में जो प्रसंग है वह वैयक्तिक पारिवारिक तथा सामाजिक नैतिकता को धक्का देनेवाला है। 'त्यागपत्र' में मृणाल का मानसिक तथा शारीरिक स्खलन दिखाया है और उसका आदर्श तथा उसक विचार भी सामाजिक और पारिवारिक नैतिकता को धक्का देनेवाले है। कल्याणी की समस्या मूलता नैतिक समस्या है। आत्मपीडन, त्याग, पति सेवा इन बातों का वर्णन इस में चित्रित है। वह भी प्रेमी और पति इन दो के बीच उलझी हुई नायिका है। सुखदा में हम ऐसी नारी का चित्र देख सकते है जो पारिवारिक जीवन और सामाजिक जीवन में सामंजस्य खोजने का प्रयास कर रही है। परन्तु उसमें सफल होने के कारण निराशा का अनुभव करते हुए आत्मपीडा भोग रही है। 'विवर्त' की कथा 'सुखदा' की कथा के समान ही प्रेम की असफलता, आर्थिक विषमता और क्रांतिकारिता में आत्म समर्पण आदि में समान है। 'व्यतित' उपन्यास में बुध्दि और हृदय या भावना और व्यवहार के संघर्ष के आलेक में जीवन की व्यस्तता का चित्रण किया गया है। 'जयवर्धन' उपन्यास में जयवर्धन के प्रेम और विवाह का जो आनंद जैनेंद्र ने चित्रित किया है, उसी से जयवर्धन के निजत्व का निर्माण दिखाया है। इस प्रकार उपन्यास में प्रेम, विवाह, राजनीतिक पदत्याग आदि से संघर्ष करनेवाले नायक के व्यक्तित्व का निर्माण साकार हो गया है। 'मुक्तिबोध' में जैनेंद्र ने हमेशा की घर और बाहर की विषयमताओं के परे व्यक्ति के अंतर बाहय का चित्रण किया है। सहाय की आत्मपीडा का चित्रण उपन्यास की उपलब्धि है।

'अनन्तर' उपन्यास में 'प्रसाद' का पारिवारिक स्तर पर अपने अंतर जगत से अपने बाहय को जोडने का प्रयास किया है। लेखक ने इस उपन्यास में पारिवारिक तथा वैयक्तिक नैतिकता को धक्का दिया है। 'अनामस्वामी' उपन्यास में पारिवारिक तथा आध्यात्मिक नैतिकता को धक्का दिया है।

संदर्भ :

१. जैनेंद्रकुमार : सुनिता,पृष्ठ क. १८४ – १८५
२. जैनेंद्रकुमार : सुखदा,पृष्ठ क. १८२
३. जैनेंद्रकुमार : व्यक्तीत,पृष्ठ क. ८६
४. वही :पृष्ठ क. १२०
५. वही :पृष्ठ क. ३२–३३
६. जैनेंद्रकुमार : जयवर्धन,पृष्ठ क. ९५
७. जैनेंद्रकुमार : मुक्तिबोध,पृष्ठ क. ५२
८. वही : पृष्ठ क. ५३ – ५५
९. जैनेंद्रकुमार : अनन्तर,पृष्ठ क. २९१
१०. वही : पृष्ठ क. २९
११. वही : पृष्ठ क. ३१
१२. जैनेंद्रकुमार : अनामस्वामी,पृष्ठ क. १२४–१२५